रामायण की अन्तर्कथाएँ

कैकयी



रामायण की अंतर्कथायें

कैकेयी

लेखक :

आर० डी० माथुर

भूमिका

यों तो इसके लिये किसी भूमिका की आवश्यकता नहीं है, लेकिन मैं यह महसूस करता हूँ कि अपनी बात कहने का जो हक मुझे मिला है, कहूँ। 'रामायण' या 'रामचरितमानस' का पाठ तो सब करते हैं, लेकिन इसकी गहनता को समझना एक खोज से कम नहीं। कैकेयी इसी ग्रन्थ की वह कड़ी है जिसके आधार पर घटनाक्रम घूमा है। सामान्य रूप से कैकेयी का स्वरूप एक 'पतिहन्ता' 'दुष्टा' स्त्री के रूप में लिया जाता है। वह एक उपमा के रूप में जानी जाती है, लेकिन जो स्वरूप मुझे दिखाई दिया है वही मैंने प्रस्तुत किया है। यदि 'कैकेयी' नहीं होती तो शायद 'रामायण' कभी पूर्ण नहीं होती।

कैकेयी का जो स्वरूप इसमें प्रस्तुत किया गया है, मुझे आशा है, पाठकों के विचारों में परिवर्तन होगा तथा कैकेयी उद्देश्यपूर्ण सार्थक स्त्री के रूप में पहचानी जावेगी।

—आर० डी० माथुर



दशरथ से विवाह

हजारों वर्ष पहले की बात है। कौशल नरेश राजा दशरथ और कैकय नरेश में काफी दिनों से अनबन चली आ रही थी। यह अनबन गहरी शत्रुता में बदल गयी। स्थिति यहां तक बिगड़ गयी कि दोनों में युद्ध हो गया। कौशल की सेनाएं कैकय प्रदेश में काफी आगे तक प्रवेश कर गयी। कैकय नरेश महाराजा दशरथ की सेना का सामना नहीं कर सका। आत्म समर्पण के सिवाय और कोई चारा नहीं था। विकट परिस्थिति से बचने के लिये कैकय नरेश ने अपने मंत्रियों से परामर्श किया और यह तय किया कि संधि कर लेना ही उचित होगा।

मंत्रणा चल ही रही थी कि महाराजा दशरथ के विशेष दूत ने प्रवेश कर कहा, "मैं कौशल नरेश का संदेश लेकर उपस्थित

हुआ हूं। अगर कैकय नरेश चाहें तो वे राजा दशरथ से संधि कर सकते हैं।"

"इससे अधिक उचित प्रस्ताव और क्या हो सकता है!"

"परन्तु संधि की पहली शर्त यह होगी कि आपको अपनी पुत्री का विवाह महाराजा दशरथ के साथ करना होगा।" दूत ने कहा।

"इस प्रस्ताव पर विचार का समय दिया जाये ताकि राजकुमारी के विचार भी ज्ञात किये जा सकें।"

"उचित ही है। आप इस पर विचार कर तीन दिन में अपने निर्णय की सूचना दें।" यह कह कर दूत कक्ष से बाहर चला गया।

कैकय नरेश दरबार से उठ कर अपने कक्ष की ओर चले गये, और तुरन्त अपने पुत्र युद्धजित को बुलवाया।

"महाराज आपने मुझे याद किया?" युद्धजित ने कक्ष में प्रवेश करने के पश्चात कहा।

"हां, पुत्र! पराजित राजा के सम्मुख संधि की शर्त रखी जाती है। राजा दशरथ ने संधि की पहली शर्त यह रखी है कि हमें अपनी पत्री कैकेयी का विवाह राजा दशरथ से करना होगा।"

"मुझे मालूम है, पिताजी इस समय जो परिस्थितियां हैं, उसके अनुसार समाज की भलाई, देश के कल्याण एवं परिवार की रक्षा के लिये यही उचित प्रतीत होता है कि प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया जाए।" युद्धजित ने कहा।

"क्या कैकेयी इसे स्वीकार कर लेगी? दोनों की आयु में बहुत अन्तर है।" कैकय नरेश बोले।



राजा दशरथ के दूत ने कहा–संधि हो सकती है, किन्तु आपको कैकेयी का विवाह राजा दशरथ के साथ करना होगा।

"यह सही है कि राजा दशरथ वृद्धावस्था में कदम रख रहे हैं। लेकिन क्या यह उचित होगा कि हम अपनी सेना को पुनः युद्ध के लिये बाध्य करें। अगर आपको और मुझे बन्दी बना लिया गया तो इस देश का क्या होगा ? कैकेयी स्वयं भी महत्वाकांक्षी एवं वीर है। वह भी इस देश के भविष्य के प्रति उतनी ही चिंतित है जितने कि आप और मैं।" युद्धजित ने कहा।

"युद्धजित ! हम इस राज्य के राजा ही नहीं कैकेयी के पिता भी हैं। दोनों की आयु के अन्तर को अनदेखा नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त महाराजा के दो महारानियाँ पहले से ही हैं। क्या हमारी पुत्री को सुख मिल पायेगा ?" अपनी आशंका व्यक्त करते हुए राजा ने कहा।

"लेकिन पिताजी ! राजा दशरथ के कोई सन्तान भी तो नहीं है। इतने बड़े साम्राज्य का आज कोई उत्तराधिकारी नहीं है। यदि कैकेयी से कोई सन्तान होती है तो वही इसकी उत्तराधिकारी होगी। संधि के साथ इस शर्त को भी रखा जा सकता है कि कैकेयी से उत्पन्न पुत्र ही राज्य का उत्तराधिकारी होगा।" युद्धजित ने सुझाव दिया।

"युद्धजित ! तुम ही इस विषय में केकयी से बात करो, उसके पश्चात ही कोई निर्णय लिया जा सकेगा।"

"ठीक है, मैं स्वयं ही कैकेयी से बात करूँगा।" अपने पिता को प्रणाम कर युद्धजित कक्ष से बाहर चला गया।

× × × ×

कैकेयी का रंग गोरा और कुछ लालिमा लिये था। नीली गहरी झील-सी आँखें, लम्बे-घने बाल, ऊँची-नुकीली नाक, पतले-लाल होंठ और लम्बा

कद, सुन्दरता के सारे गुण उसमें मोजूद थे। कैकेयी साधारण, कोमल एवं भीरु राजकुमारी नहीं थी। उसमें असाधारण गुण थे। हठीली, उग्र, तेजस्विनी, महत्वाकांक्षी तथा वीर थी। उसने कई युद्धों में भाग भी लिया था। अभी थोड़ी देर पहले ही उसकी दासी मंथरा राज्य परिषद् में हुई समस्त कार्य-वाही की सूचना देकर गयी थी। उसी पर विचार करते हुये कैकेयी इतनी खो गयी थी कि उसे यह भी पता नहीं चला कि युद्धजित कब से उसके कक्ष में उपस्थित है। युद्धजित बहुत देर तक विचार-मग्न कैकेयी को देखते रहे। जब समय अधिक हो गया तो उन्होंने ताली बजाते हुये कहा—"लगता है, आज राजकुमारी जी गहन चिन्तन में हैं !"

चौंकते हुये—"भैया तुम, अचानक इस तरह कैसे ?"

"क्यों, क्या राजकुमारी ने आज्ञा निकाल रखी है कि उनके कक्ष में कोई प्रवेश नहीं कर सकेगा ?"

"नहीं ! ऐसा मैं सोच भी नहीं सकती। कहो, कोई प्रयोजन तो होगा आने का। इस समय अवकाश कैसे मिल गया युद्धजित को ?"

"आने का विशेष कारण है, इसीलिए चिंतापूर्ण सूचना के साथ उपस्थित होना पड़ा है। एक समस्या पर तुम्हारी राय की आवश्यकता है।" सकुचाते हुये युद्धजित ने कहा।

"मुझे मालुम है, किस विषय पर सहमति की आवश्यकता है। मैं स्वयं ही राज्य की वर्तमान परिस्थितियों का विश्लेषण करने का प्रयास कर रही थी।" कैकेयी ने कहा।

"यदि ऐसा है तो इसके लिये पिताजी के पास एक प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ है।"

"मुझे वह भी ज्ञात है। मंथरा से आज की बैठक का सब विवरण मुझे मिल चुका है। भैया ! मैं परिवार की रक्षा और देश के कल्याण के लिये सब कुछ त्याग कर सकती हूं। मान-सम्मान के लिये अपने प्राण तक दे सकती हूं।"

"यदि यह सत्य है तो तुम्हें हमारे कहे अनुसार कार्य करना होगा। महाराज दशरथ प्रौढ़ हो चले हैं। आयु में तुमसे बहुत बड़े हैं। फिर भी उन्होंने तुमसे विवाह का प्रस्ताव किया है। मुझे विश्वास है कि इस प्रस्ताव को अपना कर्तव्य समझ कर पूरा करोगी।"

"ठीक है भैया ! पिताजी से कह दें कि वे दशरथ के प्रस्ताव को स्वीकार करलें।" कैकेयी दृढ़ता से बोली।

"धन्य-हो कैकेयी ! तुम्हारे त्याग ने आज सम्पूर्ण कैकयी प्रदेश को अपमानित होने से बचा लिया है। तुम्हारे त्याग को यह देश कभी नहीं भूलेगा। मुझे तुमसे यही आशा थी। अच्छा अब मैं चलता हूँ। महाराज बाट देख रहे होंगे।" और युद्धजित कक्ष से बाहर हो गया।

कैकयी नरेश एवं युद्धजित में मंत्रणा करने लगे। यह निश्चित किया गया कि संधि के साथ यह भी शर्त रखी जाये कि कैकेयी का पुत्र ही अयोध्या का युवराज होगा।

× × ×

राजा दशरथ ने यह सोचकर इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया कि महारानी कौशल्या एवं सुमित्रा से कोई सन्तान नहीं थी। यदि कैकेयी के पुत्र होता है तो स्वतः ही वह अयोध्या का युवराज बनेगा।

महाराज दशरथ से कैकेयी का विवाह सम्पन्न हो गया। कैकेयी के साथ उसकी दासी मंथरा भी अयोध्या आई थी। युद्धजित को भी अपने सहयोग के लिये दशरथ अयोध्या ले आये थे।

कैकेयी अयोध्या में आई तो वह कौशल्या और सुमित्रा की तरह घर पर बैठ कर ही अपने पति की रक्षा की कामना नहीं करती थी, वरन् वह युद्ध की बात सुनते ही कवच पहन पति के साथ युद्ध को जाने को तैयार हो जाती थी। कैकेयी खड्ग चला सकती थी। धनुष-बाण चलाना जानती थी और अच्छे सारथी के समान कुशलता से रथ संचालन भी कर सकती थी।

दो वरदानों की प्राप्ति

एक बार राजा दशरथ के पास दण्डकारण्य के वैजयन्त नगर में रहने वाले शम्बर नामक बलशाली असुर के साथ युद्ध करने हेतु इन्द्र का निमंत्रण आया। महाराज दशरथ युद्ध में जाने की तैयारी करने लगे। कैकेयी भी उनके साथ जाने को तैयार हो गई। इस युद्ध में दशरथ बुरी तरह घायल हो गये थे। कुशल सारथी होने का परिचय देते हुये कैकेयी दशरथ को युद्ध-स्थल से बाहर निकाल लाई और उनके प्राणों की रक्षा की। इस कौशल को देखकर दशरथ ने कहा—"कैकेयी ! जो साहस व चतुरता का परिचय तुमने दिया है और हमारे प्राणों की रक्षा की है, उसका उपकार तो हम नहीं चुका सकते; लेकिन हम तुम्हें दो वर माँगने और उसे पूरा करने का वचन अवश्य देते हैं।"

"यों तो मुझे सब कुछ प्राप्त है, महाराज ! इस समय तो इसकी उपयोगिता नहीं है। हाँ, किसी अन्य अवसर पर उन्हें माँगने की इच्छा है।"



कुशल सारथि की भांति कैकेयी साहस और चतुरता के साथ
दशरथ को युद्ध-स्थल से बचा लायी ।

युद्ध के पश्चात् स्वस्थ होकर एक दिन, दशरथ इन्द्र के निमंत्रण पर इन्द्रलोक गये। इन्द्र महाराजा ने दशरथ का परिचय अपने सभी सभासदों से करवाया। सभा में शनिदेव भी उपस्थित थे। पर इन्द्र ने शनिदेव को छोड़ दिया और आगे बढ़ गये। "ये कोने में कौनसे देव हैं जो अपना मुँह नीचा किये बैठे हैं?" इस कथन को अनसुना कर इन्द्र आगे बढ़ने लगे तो दशरथ ने पुनः अनुरोध किया, "इनसे आप स्वयं ही परिचय प्राप्त करलें।" कहते हुये इन्द्र आगे बढ़ गये।

"हे देव! आप अपना परिचय दें। मैं कोशल नरेश दशरथ हूँ!"

"मैं शनिदेव हूँ।"—अपना परिचय देने हेतु शनि ने सिर ऊपर उठाया ही था कि इन्द्र ने लौटते हुये दशरथ को आगे धकेलते हुये कहा—"क्या करोगे परिचय करके, इनके दर्शन मात्र से ही अनिष्ट होता है!"

जब से दशरथ इन्द्रलोक से लौटे, अपने आप को दुर्बल सा महसूस करने लगे थे। कैकेयी से भी जब कोई सन्तान नहीं हुई तो वे और भी अधिक चिन्तित रहने लगे। पुत्र-प्राप्ति के लिये महाराज ने पुत्र-कामेष्टि यज्ञ करने का निश्चय किया।

"पुत्र—कामेष्टि" यज्ञ की पूर्ण तैयारी के पश्चात महाराज दशरथ ने यज्ञ प्रारम्भ किया। पूर्णाहुति के समय एकाएक अग्नि-कुण्ड से यज्ञ पुरुष प्रकट हो गया। उसके हाथ में खीर का पात्र था। 'खीर' का प्रसाद राजा दशरथ को देते हुये कहा कि इसे अपनी रानियों को खिला दें।

दशरथ ने उस पात्र को स्वीकार कर अपनी महारानी कौशल्या को दिया। कौशल्या ने इस पात्र में से 'खीर' पीकर सुमित्रा को दे दिया। सुमित्रा ने खीर पीकर पात्र कैकेयी को सौंप दिया। खीर को ग्रहण कर कैकेयी ने पुनः वह मात्र सुमित्रा को लौटा दिया।

यथा समय तीनों रानियां गर्भवती हुई। पहले कौशल्या के पुत्र हुआ। उसके पश्चात केकैयी के भी पुत्र हुआ। सुमित्रा के दो पुत्र हुये। दशरथ प्रसन्न हो उठे। पूरी अयोध्या में खुशियां मनाई जाने लगीं। शीघ्र ही चारों पुत्रों का नामकरण करने हेतु गुरु वशिष्ठ से अनुरोध किया गया।

"गुरुदेव ! अब आप इन चारों की जन्मकुण्डलियां तैयार कर नामकरण कर दें।"

गुरुवर बोले—"राजा दशरथ ! ये चारों पुत्र बहुत ही भाग्य-शाली है। इन पुत्र-रत्नों को प्राप्त कर कौशल देश धन्य हो गया है। कौशल्या का पुत्र युग पुरूष होगा। इसका नाम 'राम' रखा जाये। कैकेयी के पुत्र का का नाम 'भरत' रखा जाये। और सुमित्रा के पुत्रों के नाम 'लक्ष्मण' और 'शत्रुघ्न' होंगे।

समय के साथ-साथ जब चारों भाई बड़े हुये तो उनकी शिक्षा का प्रबन्ध किया गया। उन्हें गुरूकुल में भेजा गया। शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात् चारों भाई अयोध्या लौट आये।

समय के साथ परिस्थितियां भी बदल गयीं। कैकेयी दशरथ की बात बिल्कुल भूल गयी। वह अपने पुत्र भरत से जितना स्नेह करती उतना स्नेह अन्य रानियां के पुत्रों से भी करने लगी। कौशल्या एवं सुमित्रा से

भी उसके अत्यन्त मधुर सम्बन्ध होते गये। राम की शालीनता व कुशल व्ययहार तथा मन को जीत लेने की कला के कारण ही कैकेयी का स्नेह भरत से भी अधिक राम से हो गया था। वह अपने विवाह के समय की शर्त को भूल गयी कि उसका पुत्र ही युवराज होगा। राम भी भरत से अधिक स्नेह रखते थे।

राम–सीता विवाह

जब विश्वामित्र राम व लक्ष्मण को अपनी एवं ऋषि-मुनियों की रक्षार्थ वन में गये थे, उस समय भरत अयोध्या में रहकर अपने पिता महाराज दशरथ को राजकार्य में सहयोग प्रदान कर रहे थे। जब राम व लक्ष्मण विश्वामित्र के आश्रम में थे उसी समय राजा जनक ने सभी राजा एवं राजकुमार को अपनी पुत्री 'सीता' के स्वयंवर में आने का निमंत्रण दिया। राजा जनक ने यह शर्त रखी थी कि जो कोई 'शिव धनुष' को तोड़ेगा उसी के साथ सीता का विवाह होगा। मुनि विश्वामित्र भी अपने साथ राम व लक्ष्मण को स्वयंवर में ले गये। जब किसी भी राजा से धनुष नहीं उठा तो विश्वामित्र ने 'राम' से कहा कि वे इसे उठाएं एवं इसकी प्रतांच्या को तानें। राम ने शिव धनुष तोड़ दिया। राजा जनक ने महाराज दशरथ को सन्देश भेजकर बारात लाने का निमंत्रण भेज दिया।

महाराज दशरथ पूरी बारात लेकर जनकपुरी पधारे। सीता का विवाह राम के साथ हुआ। इसी अवसर पर लक्ष्मण का विवाह उर्मिला के साथ तथा संकाश्या के शासक कुशध्वज की दो पुत्रियाँ माण्डवी और



राम ने शिव धनुष तोड़ दिया

श्रुतिकीर्ति का पाणिग्रहण क्रमशः भरत एवं शत्रुघ्न के साथ सम्पन्न हुआ। अयोध्या में चारों ओर खुशियाँ मनाई गयीं। तीनों मातायें प्रसन्न थीं।

अपने राज्य में व्याप्त शांति एवं सुरक्षा को देखते हुये दशरथ अपना अधिकांश समय महलों में ही व्यतीत करने लगे थे। राम, भरत और लक्ष्मण तीनों राजकुमार राज्य कार्य के संचालन में सहयोग देने लगे थे।

नियति का खेल

अब राजा दशरथ के पास अपने एवं राज्य के भविष्य के विषय में सोचने का अधिक समय उपलब्ध था। सुरक्षा की दृष्टि से कैकय राज्य एवं जनकपुरी के राज्य के साथ सम्बन्ध प्रगाढ़ हो गये थे। दूर-दूर तक असुरों का सफाया हो चुका था। पूरे राज्य में अमन-चैन था।

पहली बार दशरथ को यह लगा कि वे अब बूढ़े और दुर्बल होते जा रहे हैं। यह आशंका होने लगी कि उनके पश्चात् युवराजों में राज-सिंहासन के लिए कहीं संघर्ष न हो। उन्हें इस बात की आशंका भी थी कि कहीं कैकेयी भरत के लिये राज्य की मांग न कर बैठे। इस कार्य में कैकेयी को अवश्य सहयोग प्रदान कर सकता है। दशरथ को राम अधिक प्रिय थे। उनकी कार्यकुशलता एवं क्षमता को वे स्पष्ट देख रहे थे। जब वे इस समस्या का समाधान नहीं खोज पाये तो वे सीधे गुरू वशिष्ठ के आश्रम में चले गये।

"गुरूदेव ! मैं अब वृद्ध हो चला हूँ। मैं चाहता हूँ कि अपनी आत्मा के सुधार और मोक्ष के लिये भी कुछ समय दूँ। चारों पुत्र अब

युवा हो गये हैं। कहीं ऐसा न हो मेरी मृत्यु के पश्चात् उनमें संघर्ष हो जाए क्योंकि आपको याद होगा कि हमने कैकेयी को वचन दिया था कि उसका पुत्र ही युवराज बनेगा। लेकिन गुरूदेव ! राम की सरलता तो आप जानते ही है। हमने हर पक्ष पर विचार किया है, लेकिन स्थिति का कोई भी हल नहीं निकल पा रहा है। ऐसी स्थिति में आप ही बतलाएँ कि मुझे क्या करना चाहिए।"

"राजन ! आपकी शंका निराधार नहीं हैं, इस पर यथाशीघ्र विचार होना चाहिये। कल ही इस विषय पर राज परिषद् में सब की राय जानने के पश्चात् ही कोई निर्णय लिया जा सकता है। आप निश्चित रहे, आपके विचारों के अनुरूप ही कोई हल निकल आयेगा।" गुरू वशिष्ठ बोले।

जिस समय अयोध्या की राज-परिषद् में युवराज की नियुक्ति का निर्णय हो रहा था भरत एवं शत्रुघ्न अपने ननिहाल गये हुये थे। राम ने अपने व्यवहार एवं सेवा से सबका मन मोह लिया था, अतः वे ही लोकप्रिय थे। राज-परिषद् ने एक मत से राम को दशरथ का उत्तराधिकारी घोषित कर दिया।

"राज-परिषद् ने एक मत से अपना निर्णय दे दिया है, हे मुनि ! आप ही कोई शुभ मुहूर्त निकालें ताकि राम का राज्याभिषेक किया जा सके।" दशरथ ने वशिष्ठजी से कहा।

"राजन् ! कल प्रातः का समय श्रेष्ठ है। राम के राज्याभिषेक की तैयारी को जावे।"—गुरू वशिष्ठ बोले।



दशरथ गुरु वशिष्ठ के पास युवराज पद के लिए मार्ग दर्शन हेतु पहुंचे ।

"सुमित्रा ! राम के राज्याभियेक की पूर्ण तैयारी प्रारम्भ कर की जाए, कल प्रातः ही राज्याभिषेक होगा।" यह कहकर महाराजा दशरथ दरबार से उठकर चले गये।

मंथरा-कैकेयी संवाद

अयोध्या एवं राजमहल को दुलहन को तरह सजाया जाने लगा। चारों ओर खुशी का वातावरण छा गया। सभी प्रसन्न थे कि राम को युवराज चुना गया है। मंगल बधावे गाये जाने लगे। यह सब तैयारी देख कर मंथरा का माथा ठनका। भरत को ननिहाल भेजकर राम का राज-तिलक करना कैकेयी के साथ धोखा है, यह विचार करती हुई वह कैकेयी के महल की ओर चल दी।

जैसे ही मंथरा ने कैकेयी के कक्ष में प्रवेश किया, कैकेयी ने खुशी से झूमते हुए कहा–मंथरा ! तूने सुना, मेरे राम का कल प्रातः राजतिलक होगा। यह देख, मैंने तेरे लिये क्या उपहार रखा है, ले, पहन ले। कहते हुए उसने एक बहुमूल्य हार मंथरा को दिया। मंथरा ने हार लेकर तुरन्त फेंक दिया।

"क्यों, क्या हुआ ? तुझे यह हार पसन्द नहीं आया ? क्या तुझे खुशी नहीं हुई ?" आश्चर्य से कैकेयी ने पूछा।

"तेरा सर्वनाश किया जा रहा है रानी ! राजा ने तेरे साथ छल किया है। भरत को ननिहाल भेज कर राम का अभिषेक किया जा रहा है !" मंथरा ने पासा फेंका।



कैकेयी ने प्रसन्न होकर मंथरा को गले का हार उपहार में दिया
किन्तु उसने उसे तुरन्त फेंक दिया

"तो क्या हुआ; राम भी तो मेरा ही पुत्र है। वह मुझसे बहुत ही स्नेह रखता है। और अब तो राजतिलक का मुहूर्त भी निकल गया है। अब किया ही क्या जा सकता है ?" कैकेयी आश्चर्य से बोली।

"बड़ी भोली हो महारानी ! तुम्हारी समझ में यह बात क्यों नहीं आ रही है कि अब कौशल्या ही राजमाता कहलाएगी। उसने राजा का मन जीत कर तुम्हारे सब अधिकार छीन लिये हैं। ठीक है, भरत को राजा नहीं बनाना है, किन्तु क्या इस अवसर पर उसे यहाँ बुलवाना भी उचित नहीं था ? क्या उसके आने की प्रतिक्षा भी नहीं की जा सकती थी ? किन्तु, राजा ने सूचना तक भिजवाना आवश्यक नहीं समझा। यह सब कुछ भरत के विरूद्ध षड़यन्त्र हो नहीं है, कौशल्या का तुम्हारे प्रति छल भी है !"

कैकेयी गम्भीर होकर मंथरा की ओर देखती रही। इसका लाभ उठाते हुये मंथरा ने एक और तीर छोड़ा—

"राजा दशरथ अब तक तुम्हें अतिशय प्रेम करते रहे हैं। क्या प्रेम इसी को कहते हैं ? क्या उन्होंने तुम्हें राम के राजतिलक की सूचना भी दी है ? तो क्या आज उन्हें तुम्हारे पिता को दिया हुआ वचन भी याद नहीं रहा कि कैकेयी का पुत्र ही अयोध्या के राज सिंहासन पर बैठेगा ? पता नहीं तुम्हारी स्मरण शक्ति को आज क्या हो गया है।"

कैकेयी पर मंथरा की बातों का असर होने लगा था। क्रमश: वह अपना विवेक भी खोती चली गयी। अब वह मन ही मन पश्चाताप भी करने लगी, सोचने लगी—"ओह ! मुझे क्या हो गया है। मंथरा

वास्तव में सही कह रही है। मैं क्यों भूल रही हूं विगत की सब बातें वह प्रगट में बोली—"मंथरा ! अब क्या किया जा सकता है ?"

मंथरा बोली—"क्या यह भी मुझे ही बताना पड़ेगा ? तुम्हें याद है—राजा के दिये दो वरदान तुम्हारे पास हैं ?" मंथरा प्रसन्न थी। तीर निशाने पर लग चुका था।

"वरदान मांगने के लिए आज से अच्छा और अवसर नहीं मिल सकेगा !"

"क्या-क्या मांगू ?"

कुछ क्षण चुप रहकर मंथरा बोली—"मांगना क्या है, पहले वर में भरत को राजसिंहासन मात्र और दूसरे में राम को चौदह वर्ष का वनवास।"

"राम को वनवास !" कैकेयी आश्चर्य से बोली।

"हाँ ! राम के अयोध्या में रहते हुये भरत कभी सुरक्षित नहीं रह पायेगा। यहाँ की प्रजा से दूर चले जाने पर लोग उसे भूल जायेंगे। तभी भरत का राज्य सुरक्षित रह पायेगा। यह सब तुम्हें दृढ़ता से करना होगा। कहीं भी कमजोरी नहीं दिखानी है। इस शृंगार को उतार कर सीधी कोप भवन में चली जाओ।" यह कह कर मंथरा वहाँ से चली गयी।



कैकेयी कोप भवन में जा बैठी

दो वचन

कैकेयी के कोष भवन में चले जाने का समाचार जब राजा दशरथ के पास पहुँचा तो वे विचलित हो उठे। वे सीधे कैकेयी के महल में पहुँचे और रूष्ठ होने का कारण पूछा। तो कैकेयी नागिन के समान पुकार उठी "क्या यही प्रेम था आपका मुझसे कि हर बात गोपनीय रखी गयी! मेरे प्रति इतना अविश्वास क्यों?"

कैकेयी की बात सुन कर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ। बोले— "गोपनीय! यह क्या कह रही हो, प्रिय! हमने कौनसी बात गोपनीय रखी है, तुमसे?"

कैकेयी बोली--"राम को राजतिलक की बात मुझे क्यों नहीं बतलाई गई?"

राजा दशरथ हँसे, फिर बोले—अच्छा तो यह बात है। फिर समझाते हुये बोले—

"प्रिय! अपने मन की शंका को बिल्कुल निकाल दो। निर्णय इतना शीघ्रता से हुआ कि समयाभाव के कारण सूचित करना सम्भव नहीं हो पाया और फिर तुम भी तो राम से उतना ही स्नेह करती हो जितना कि भरत से। तुम्हें तो प्रसन्न होना चाहिये।"

"आपके पास कौशल्या को सूचित करने का तो समय था, बहिन सुमित्रा को भी इसकी सूचना भिजवाई गई किन्तु मुझे इस योग्य नहीं समझा गया? आखिर यह छल मेरे साथ क्यों हुआ?"

दशरथ मौन रहे ।

"शायद आपको इस बात का भय था कि कहीं कैकेयी को अपने पिता को दिये गये वचन याद न आ जाएँ और आपके इस षड़यंत्र का भंडाफोड़ न हो जाए ? क्या भरत के आने की बाट भी नही देखी जा सकती थी ? राजतिलक की सूचना भरत तक को भी नही भेजी गयी । इतना अविश्वास ?" कैकेयी का स्वर कठोर होता गया ।—"बोलो, शायद महाराज को अपने दिये हुये दो वरदानों की भी याद नहीं ?"

"राजा दशरथ अपने दिये वचनों को भूल जाएगा, यह तुमने सोच कैसे लिया रानी ?" आश्चर्य से दशरथ बोले ।

"मुझे विश्वास इसलिये नहीं हो रहा है, क्योंकि आपने तो संधि की शर्त ही भुला दी । जब एक राजा दूसरे राजा की शर्त तोड़ सकता है तो फिर अपनी पत्नी के वरदानों को भी भुला सकता है ।"

"नहीं कैकेयी, नहीं । हम रघुवंशी हैं, वचन से फिर नहीं सकते । तुम अपने वर माँगों तो सही ।"

"ठीक है, राम की सौगन्ध खा कर कहो कि अपने वचन से नहीं हटेंगे और वचन पूरा करेंगे ।" रूष्ठ भाव से केकैयी ने कहा ।

"हम सौगन्ध खाकर कहते हैं । हमें आश्चर्य हो रहा है कि आज कैकेयी को हम पर विश्वास क्यों नहीं हो रहा है ! आश्चर्य से देखते हुये राजा रशदथ ने कहा ।

"महाराज ! अभी आपने सौगन्ध ली हैं, इसलिये मैं अपने वर



कैकेयी ने क्रोध में भरकर कहा—आखिर मेरे साथ
यह छल क्यों हुआ ?

माँग रही हूँ। पहले वर में भरत का राज्याभिषेक माँगती हूं और दूसरे वर के रूप में राम को चौदह वर्ष का वनवास।"

"कैकेयी !"

कैकेयी के कठोर वचनों को सुनकर राजा दशरथ व्याकुल हो चीख पड़े। जैसे धड़ाम से आसमान से आ गिरे हों। एक बार तो उन्हें विश्वास ही नहीं हुआ कि ये शब्द कैकेयी के हो भी सकते हैं।

"महाराज ! मुझे 'हाँ' 'ना' में उत्तर चाहिये। आप इन्हें पूरा करना चाहते हैं या अपने वचन से फिरना चाहते हैं ?" क्रोधित होते हुये कैकेयी ने पूछा।

दशरथ समझाते हुयें बोले—"भरत को राजसिंहासन की बात तो समझ में आती हैं, लेकिन राम को वनवास क्यों ? यह तुम भली-भाँति जानती हो कि राम हमें कितने प्रिय हैं। खन्हें अयोध्यावासी कितना प्यार करते हैं। राम के बिना हमारे प्राण नहीं...नहीं...बचेंगे।"

राजा दशरथ के बार-बार समझाने पर भी कैकेयी नहीं मानी। वह फिर बोली–ठीक है, महाराज ! आप अपने वरदानों को पूरा नहीं कर सकते तो मैं स्वयं राम को बुलवा कर इसका निर्णय करवाती हूँ। यह कह कर कैकेयी ने सुमत्रा को राम को बुलवाने भेज दिया।

अवसाद में डूबे राजा दशरथ निढ़ाल हो पलंग पर लुढ़क गये।

जिस समय सुमन्त ने राम के कक्ष में प्रवेश किया उस समय राम सीता से कह रहे थे—प्रिय ! गुरू वशिष्ठ का इस प्रकार अकस्मात आकर



ठीक है—राम की सौगन्ध खाकर कहो कि अपने वचन से नहीं हटेंगे।

महत्त्वपूर्ण निर्णय सुनाने और उठकर तुरन्त चले जाने से स्थितियाँ रहस्यमयी बनती जा रही हैं। इतना ही नहीं, राज-परिषद् द्वारा आज ही निर्णय लेना और कल प्रात: ही अभिषेक होना, इस आतुरता का कारण क्या हो सकता है ? ऐसे समारोह तो महीनों की तैयारी के पश्चात् ही हो पाते है। सामन्तों, मित्रों, राजाओं, सम्बन्धियों, ऋषियों, आचार्यों आदि को निमंत्रित किया जाता है। पर कौशल के युवराज का अभिषेक इस प्रकार क्यों हो रहा है ? कल प्रात: तक कितने लोगों को निमंत्रित किया जा सकेगा ? सोचो, सीते ! अन्य सम्बन्धी तो दूर, सम्राट् सीरध्वज तक को भी अभी तक तक निमंत्रण नहीं भेजा गया। भरत शत्रुघ्न भी अयोध्या में उपस्थिति नहीं है ?"

राम यह सब कुछ कह ही रहे थे कि मंत्री सुमन्त्र ने प्रवेश किया और बोले–"युवराज ! महाराज ने अपको तुरन्त महारानी कैकेयी के कक्ष में याद किया है। माता कैकेयी का भी यही आदेश है।"

"बात क्या है, सुमंत्र ? महाराज से तो मैं कुछ समय पहले ही मिल कर आया हूँ !" राम बोले।

"कुमार स्वयं चलकर देख लें।" सुमंत्र ने अपने अन्तर्मन के उद्‌गारों को छुपाते हुये कहा।

सुमंत्र के साथ राम कैकेयी के कक्ष की ओर चल पड़े सुमन्त्र बाहर ही रूक गये। राम अन्दर प्रवेश कर बोले—"पिताश्री ! मैं उपस्थित हूँ। क्या आदेश है ?"

महाराज दशरथ ने आँखें खोली। बूढ़ी, थकी-हारी आँखों से आँसू छलकने लगे। यह दोनों एक दूसरे को टकटकी लगाए देखते रहे

कुछ क्षणों तक। महाराज दशरथ राम को अधिक देर तक नहीं देख सके, करवट बदलकर आँखें मूंद लीं।

"माता! कैसे याद किया था महाराज ने, आपको तो ज्ञात ही होगा?" राम ने आश्चर्य से पूछा।

"तुम्हें न्याय करने के लिये बुलाया है, पुत्र!"

"न्याय! पुत्र तो केवल आदेश का पालन करता है, माँ! आदेश दें, किस प्रयोजन हेतु याद किया गया है?"

"राम! तुम्हारे पिता तुमसे बहुत प्रेम करने लगे हैं।" केकैयी ने कहा।

"प्रेम तो मुझसे आप भी करती हैं, माता! किन्तु, यह स्थिति...

बीच में ही केकैयी बोल उठी—"राम! महाराज ने एक वचन मेरे पिता को दिया था, आज उसकी चर्चा मैं नहों करूंगी। परन्तु, शम्बर युद्ध के पश्चात महाराज ने दो वर मुझे दिये थे। आज मैंने दोनों वरदान माँगे हैं। राम! मैं जानती हूँ कि मैं बहुत कठोर हो रही हूँ। लोग बुरा कहेंगे, पर मेरे मन में तनिक भी पाप नहीं है, तनिक भी मैल और दुराव नहीं है। तुम्हें अपने पिता की स्थिति को देखकर लग रहा होगा कि मैं दुष्ठा हूँ, पति को इतना कष्ट दे रही हूँ, पर सच यह नहीं है, पुत्र!"

"माँ···" राम कुछ कहना चाह रहे थे, लेकिन कैकेयी पुनः टोकते हुये बोली—

"नहीं राम! मैं आज वह सब कहूँगा जो चाहकर भी आज तक नहीं कह सकी थी। मैं दवी होने का स्वांग नहीं कर रही। तुम्हारे प्रति

विशेष प्रेम और पक्षपात भी नहीं जमा रही । मैं वह धरती हूँ, जिसकी छाती करुणा से फटती है तो उसमें से शीतल [illegible] से [illegible] है [illegible] दोनों [illegible] जाता है । आज मेरी स्थिति ऐसी ही है। मैं [illegible] अनुसरण नहीं करती आई थी । मैं पराजित राजा की ओर से विजयी सम्राट् से हुई संधि के फलस्वरूप एक भेंट के रूप में आई थी । मैं इस घर में प्रतिहिंसा की आग में जलती आई हूँ ।

शनैः शनैः मैंने स्वयं को सहज किया । पिता द्वारा लिया गया वचन भुला दिया । शंकर युद्ध के पश्चात् मिले वरदानों का कभी उपयोग नहीं किया । और अयोध्या की प्रजा के समान ही चाहा कि राम तुम ही युवराज बनो । तुम ही इस योग्य हो, पुत्र ! किन्तु, मुझे इस सद्-भावना का पुरस्कार क्या मिला ?

कुछ रुकने के पश्चात् कैकेयी बोली—"पुत्र ! मैं सदा से यह अनुभव करती रही कि मुझ पर कभी विश्वास नहीं किया गया । मैं एक आकर्षक किन्तु भय की वस्तु ही बनी रही । मुझे सिंहासन पर तो स्थान मिला किन्तु हृदय में नहीं । जब-जब भी महाराज ने कोई निर्णय लिया है, सब के कारण मुझसे छिपाया जाता रहा है । आज, जब मंथरा तुम्हारे राज्याभिषेक का समाचार लायी तो मैंने खुशी से अपनी बहुमूल्य मोतियों की माला उसे पुरस्कार में दे डाली । लेकिन उसने उसे स्वीकार नहीं किया । किस दुस्साहस पर ? जानते हो राम किसलिये ? तुम्हारे पिता के मेरे प्रति अविश्वास के आधार पर ।

"महाराज को आशंका भी थी कि कुछ लोग अभिषेक में विघ्न डालेंगे । कौन लोग हो सकते हैं वे ? सिवाय मेरे भरत के और कौन हो



मैंने जो कुछ किया तुम्हारे हित के लिये ही किया।

सकते हैं ? यह सब है राम ! इसीलिए तो मुझे बताया नहीं गया। भरत को ननिहाल भेज दिया।"

कैकेयी का स्वर और ऊँचा होता गया और आँखें आक्रोश से जल उठीं—"यही है मेरी सद्भावना का प्रतिकार ?" यह सही है कि मंथरा एक साधारण और मूर्ख दासी है। उसकी बात किसी विवेकशील व्यक्ति को नहीं माननी चाहिए, फिर भी आज मैं उसकी बात मानूंगी।"

"मुझे क्या आदेश है ?" राम ने पूछा।

"पिता के वरदानों को पूरा करो ! कैकेयी का स्वर और भी कठोर हो गया था।"

"मेरी क्षमता में हुआ तो अवश्य पूरा करूंगा।" राम का विनम्रता एवं आदर को देखते हुये कैकेयी का स्वर कोमल और करूण हो उठा—"मैं जानती थी कि तुम विरोध नहीं करोगे। पुत्र ! मैंने किसी को पहचाना हो या न पहचाना हो, तुम्हें पहचानने में मैंने तनिक भी भूल नहीं की है। राम ! मैंने दो वर मांगे हैं।" कैकेयी अपनी पीड़ा को कठोरता का कवच ओढ़ाकर बोली—"पहला-भरत का युवराज पद पर अभिषेक हो और दूसरा–तपस्वी वेश में तुम आज ही चौदह वर्षों के लिए वनवास के लिए प्रस्थान करो।"

राम सहजभाव से बोले—"मां ! पिता के वरदानों को पूर्ण करने के लिये मैं आज ही वन की ओर प्रस्थार करूंगा। इस वंश की चली आ रही परम्परा को कलंकित नहीं होने दूंगा। माता ! एक ही इच्छा है, वल्कलों का प्रबंध कर दें, इन्हें मैं आपसे ही ग्रहण कर वन को प्रस्थान करूंगा। मैं सबसे विदा लेकर, अभी उपस्थित होता हूं।"

कैकेयी के महल से निकलकर राम सीता के पास गये और वन में जाने का समाचार दिया। सीता भी साथ जाने की तैयारी करने लगी। लक्ष्मण भी साथ चलने का आग्रह करने लगे। राम ने दोनों को बहुत समझाया। जब दोनों हीं नहीं माने तो तीनों ने तैयार होकर माता कौशल्या एवं सुमित्रा से विदाई ली तथा पुनः कैकेयी के महल में पहुँचे।

पिता एवं माता को प्रणाम कर मंद स्वर में कहा–'पिताजी...! दशरथ ने आँखे खोली, आँखे डबडबा आयी।' वे बोले—

"पुत्र राम। जब मुझमें शक्ति थी तो विवेक नहीं था, अब आज समय आया तो कार्य-शक्ति नहीं है···।" कहते हुए सहसा उन्होंने आंखें बन्द कर ली जैसे राम की ओर देखना अत्यन्त पीड़ादायी लग रहा हो। बड़ो कठिनाई से बोले–'मन्त्री सिद्धार्थ से कहो, वह धन-कोष, अयोध्या के कुशल वास्तुकार तथा चतुरंगिनी सेना लेकर राम के साथ जाएं।"

'नहीं' कैकेयी चीखते हुये बोली—'इन सब पर किसी का अधिकार नहीं है।' स्पष्ट और दृढ़ स्वर में कैकेयी ने कहा–'पुत्र। जितना चाहो धिक्कारो। राम तुम अभी वल्कल धारण कर वन जावोगे।'

'मां विवाद और प्रस्तावों का अवकाश नहीं है। यह निश्चित है कि मैं वन जा रहा हूं। मेरे साथ सीता और लक्ष्मण भी जा रहे हैं। आप अनुमति आशीर्वाद देकर विदा दें। राम ने पुनः दशरथ को प्रणाम किया और बोले–'पिताजी। मेरी मां आपकी आश्रित है, आज्ञा दें।'

'राम······कहने के साथ ही दशरथ मूर्छित हो गये। राम, सीता और लक्ष्मण ने बारी-बारी से पिता एवं माताओं को प्रणाम कर वल्कलों को स्वीकार किया और वन के लिये प्रस्थान कर गए।

सुमंत्र ने वन से लौट कर बताया कि राम ने रथ एवं राजकुमारों के वस्त्र आदि लौटा दियें हैं और वनवासी के वेश में वे पैदल ही दंडक वन की ओर प्रस्थान कर गये हैं। यह समाचार सुन कर दशरथ ने 'राम...' शब्द का उच्चारण किया और प्राण त्याग दिए।

दशरथ की मृत्यु का समाचार लेकर भरत को ननिहाल से बुलाने के लिए एक दूत को भेजा गया। जिस समय भरत ने अयोध्यावासियों के चेहरे उदास हैं, दुःख की छाया व्याप्त है और बाग उद्यानों, पेड़-पौधों पर मुर्दिनी छायी हुई है। अब घोर आशंका के साथ भरत ने महलों में भी खामोशी और उदासी का वातावरण देखकर भरत को सन्देह हुआ कि कुछ अनहोनी घटी है।

मां कैकेयी के पास पहुंच कर भरत ने पूछा, 'मां' यह सब क्या है ? अयोध्या वासियों के चेहरे क्यों मुरझाये हैं ? बाग बगीचों में भी पानी नहीं लगने से व मुरझाये हुये हैं, क्या कोई बड़ी घटना घटित हुई है ? भाई राम-लक्ष्मण भी दिखाई नहीं दे रहे हैं ? महाराज भी कहीं नहीं दिखे...।

कैकेयी तुरन्त उत्तर देने का साहस नहीं कर पा रही थी। मंथरा के अत्यधिक उकसाने तथा कुछ अपनी दबी भावनाओं के कारण तथा कुछ अपने साथ हुये अविश्वास के कारण वह अपना विवेक खो बैठी थी। वह सब कुछ भरत को बताने में कष्ट का अनुभव कर रही थी। उसे इस बात का भय था कि कहीं भरत उसे 'पतिहन्ता' 'दुष्टा' न माने। लेकिन शीघ्र ही अपने भावों पर नियंत्रण कर स्नेह से भरत के सिर पर हाथ फेरते हुये बोली—"बेटे ! तुम्हें अपने पिता की अंत्येष्ठि के लिये बुलाया गया है।"



माँ कैकेयी के पास पहुँचकर भरत ने पूछा, 'माँ' यह सब क्या

"अंत्येष्ठि ! आखिर महाराज को हुआ क्या था ? मुझे ही अंत्येष्ठि के लिये क्यों कह रहो हो ? भईया, राम कहाँ हैं ? अब वही मेरे पिता हैं ।"

महल में सन्नाटा छाया रहा । कोई कुछ नहीं बोला ।

"मां ! तुम चुप क्यों हो ?" भरत ने व्याकुल होकर फिर पूछा ।

"राम नहीं हैं । मैंने उन्हें वन में भेज दिया है । तुम ही अब कौशल के राजा हो । इतने बड़े साम्राज्य के स्वामी । राजा को दीन-हीन की तरह रोना शोभा नहीं देता, भरत !" समझाते हुये कैकेयी ने कहा ।

"भैया को वनवास ! पर किस अपराध में ?"

"भरत ! तुम्हारे हक को नजरअन्दाज कर धोखे से महाराज ने राम का राज्याभिषेक करना चाहा था । इतना ही नहीं, इस निर्णय को मुझसे भी छिपाया गया । तुम्हारे नाना को दिये गये वचन भी भूल गये । मैं इस अपमान को नहीं भूल सकी । महाराज के दिये दो वरदानों में मैंने तुम्हारे लिये अयोध्या का राज्य और राम को चौदह वर्ष का वनवास माँगा है, ताकि तुम बिना किसी विघ्न के अयोध्या का राज्य सम्भाल सको ।"

"मां ! तुम्हारा यह भी रूप होगा, ऐसा मैंने सपनों में भी नहीं सोचा था । महाराज अयोध्या के राजा ही नहीं, तुम्हारे पति भी थे । उनकी भावनाओं का निर्णय का आदर करना तुम्हारा धर्म था । मां ! यह तुमने कैसे सोच लिया कि भरत यह सब स्वीकार कर लेगा ?"

"भरत !"......कैकेयी ने कुछ कहना चाहा ।

"नहीं मां ! आज मैं तुम्हें मां कहते हुये भी अपने को अपमानित महसूस कर रहा हूँ । पुत्र को कुपुत्र होते तो देखा सुना था लेकिन मां को



"बेटा भरत ! मैंने जो कुछ किया, तुम्हारे हित के लिये ही किया।"

कुमाता होते आज ही देखा है। अपने द्वेश के कारण तुमने सारी अयोध्या को मृत्युपाय बना दिया। जो राम इस राज्य की धड़कन हैं, क्या तुमने नहीं देखा पूरे राज्य के जीवन ही रुक गये हैं!" भरत ने क्रोध में आकर कहा।

"बेटे! मैंने जो कुछ भी किया, तुम्हारे हित के लिए किया। यह तुम्हारा हक था। तुम्ही बताओ, तुम्हारा इस प्रकार दुःखी होना कितना उचित है? उठो, अपना कर्त्तव्य पूरा करो।"

"हाँ, मैं अपना कर्त्तव्य ही पूर्ण करूँगा। मैं वन जाकर राम को लौटाकर लाऊँगा और सिंहासन उन्हें सौंप दूँगा। तब तक यह मेरे पास उनकी अमानत के रूप में ही रहेगा।"

राम से अनुरोध

अपने पिता की अंत्येष्ठि एवं क्रियाकर्म करने के पश्चात् भरत ने वन जाने की तैयारी प्रारम्भ कर दी। साथ में जाने के लिये तीनों मातायें भी तैयार हो गयीं। भरत ने एक बड़ो सेना अपने साथ इस उद्देश्य से ले ली, कहीं राम, लक्ष्मण व सीता संकट में न हों। रक्षा के लिए इसका उपयोग किया जा सकेगा और धूमधाम के साथ अयोध्या के सम्राट को अयोध्या में लाया जायेगा।

पंचवटी में पहुँचकर भरत ने राम से अयोध्या लौटने का अनुरोध करते हुये कहा, "भैया! मैं अपनी माँ की ओर से क्षमाप्रार्थी हूँ। उन्होंने स्वार्थ, भय, असुरक्षा के कारण ही यह सब किया। उन्हें क्षमा कर दो।



पंचवटी में पहुंचकर भरत ने राम से कहा— भैया!
मैं अपनी ओर मां की ओर से क्षमा प्रार्थी हूं।

पूरी अयोध्या ने आपसे अनुरोध करने का दायित्व मुझे दिया है कि आप वापस लौट चलें ।"

"नहीं भरत ! मुझे माता कैकेयी के प्रति किसी प्रकार का कोई रोष नहीं है । वे मेरी पूज्या है । उनका हर आदेश मुझे स्वीकार है । अब, जब पिताजी नहीं रहे हैं तो यह और भी आवश्यक हो गया है कि उनके दिये वचनों को हम पूरा करें । भरत ! मैंने कभी तुम्हें अपने से अलग नहीं समझा । नियति का खेल यही है । इसे समझना हर मनुष्य के लिये कठिन होता है । भरत ! तुम्हें भी माँ के आदेश की पालना करनी चाहिए । हमें पिताजी एवं माँ के आदेश को पूर्ण करना है । और चौदह वर्ष की अवधि होती ही कितनी है ।" राम ने भरत को समझाया ।

तभी आंखों में पश्चाताप के आंसू भरकर कैकेयी ने राम के पास आकर कहा--"राम ! यह मेरा अधिकार नहीं था, मैं दुष्टा हो गई थी, विवेकहीन होकर ही अपने हठ पर अड़ी रही । मैंने पति को खो दिया है, अब नहीं चाहती कि तुम वनवासी होकर रहो । मैं भी तुमसे निवेदन करती हूँ कि वापस लौट चलो ।" कैकेयी की आँखों से आंसू बह रहे थे ।

"माँ ! क्या आप चाहती हैं कि तुम्हारा राम लोगों की निगाह में अपमानित हो ? लोग यही कहें कि राज्य-सुख के लिये राम ने पिता के वचनों को तोड़ दिया । आपके आशीर्वाद और पिताजी के प्रताप से में इस योग्य हूँ कि वनवास की यह अवधि पूर्ण करूँ ।"

"राम ! यदि मैं स्वयं तुम्हें इस बन्धन से मुक्त करूँ तो ?"

"माँ ! यह बन्धन नहीं, पिताजी की अन्तिम समय की भावना

एवं संतोष का कारण है। क्या आप यह चाहती हैं कि वे स्वर्ग में महसूस करते रहें कि पुत्र ने उनके आदेश का उल्लंघन किया है ?"

भरत की ओर देखते हुये राम ने कहा—"भरत ! इसी में हमारी भलाई है कि मुझे अपना कर्त्तव्य पूरा करने दो और तुम मेरा यह आदेश मानते हुये कि अयोध्या को तुम्हारी आवश्यकता है, तुम वापस लौट जाओ। जाओ भैया, ध्यान रखना तुम्हारे राज्य की जनता को कोई कष्ट नहीं होने पावे।

"ठीक है भैया ! यदि यही आपका आदेश है तो मैं लौट जाता हूँ, लेकिन राजसिंहासन कभी स्वीकार नहीं करूंगा। आपकी ही अमानत बना रहेगा। आप मुझे अपनी पादुकायें दे दें ताकि उन्हें राजसिंहासन पर प्रतिष्ठित कर राज्य का संचालन करता रहूं। आपका आशीर्वाद सदैव मेरे साथ रहे।

इस प्रकार सभी लोग अयोध्या लौट आये। भरत नें राम की पादुकाओं को राजसिंहासन पर विराजित किया और स्वयं एक साधारण सेवक के रूप में कौशल राज्य का संचालन करते रहे।

....



मुन्शी प्रेमचंद का सचित्र किशोर साहित्य

स्वामी विवेकानन्द
महाराणा प्रताप
अकबर महान
पंच परमेश्वर
शराब की दुकान
ईदगाह
बड़े घर की बेटी
नमक का दरोगा
गुल्ली डण्ड़ा
दो बैलों की कथा
ठाकुर का कुआ
बूढ़ी काकी
सुजान भगत
ममता
मन्दिर
पूस की रात
चमत्कार

मृतक भोज
सत्याग्रह
दूध का दाम
मुक्ति मार्ग
शंखनाद
सद्गति
घरजमाई
मर्यादा की वेदी
दो भाई
मंत्र
राजा हरदौल
राजा मानसिंह
गोपालकृष्ण गोखले
माँ
शान्ति
क्षमा

शतरंज के खिलाड़ी
बलिदान की बेदी
पछतावा
खुदाई फौजदार
रानी सारन्धा
कजाकी
महातीर्थ
बालक
बड़े भाई साहब
समरयात्रा
न्याय
स्वामिनी
झाँकी
जंगल की कहानियाँ
नशा
स्मृति का पुजारी